लिए अभिरक्षा में लेने हेतु निदेश किया जाता है । राज्य द्वारा उक्त प्रत्यर्थियों (प्रत्यर्थी सं. 2 और 3) के विरुद्ध फाइल की गई अपीलें मंजूर की जाती हैं, जैसा कि ऊपर उपदर्शित है और उन्हें अन्य प्रत्यर्थियों के विरुद्ध खारिज किया जाता है ।

अपीलें प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 के पक्ष में मंजूर की गई और अन्य के पक्ष में भागतः खारिज की गई ।

आर्य

[1998] 4 उम. नि. प. 82

राजस्थान उच्च न्यायालय

बनाम

रमेशचंद पालीवाल और एक अन्य

19 फरवरी, 1998

न्यायमूर्ति एस. सगीर अहमद और न्यायमूर्ति जी. बी. पटनायक

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 229, 214, 216, 223, 226 और 146[सपठित भारत शासन अधिनियम, 1935, धारा 241 और 242(4), भारत शासन अधिनियम 1915, धारा 106 कलकत्ता उच्च न्यायालय लेटर्स पेटेन्ट 1865, खंड 4 और 8 (1919 में यथासंशोधित और राजस्थान उच्च न्यायालय कर्मचारिवृंद की सेवा शर्तें) नियम, 1953, नियम 2क और 2 तथा अनुसूची 1] – न्यायिक हस्तक्षेप की व्याप्ति – उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा रजिस्ट्रार को अनुच्छेद 226 के अधीन निदेश कि कुछ पदों को उच्च न्यायालय के स्थापन के अधिकारियों से भरे जाने की और मुख्य न्यायमूर्ति के माध्यम से पूर्ण न्यायालय के समक्ष यह विनिश्चय करने के लिए रखने की व्यवहार्यता के बारे में रिपोर्ट तैयार करे कि क्या न्यायिक सेवाओं के अधिकारियों को उच्च न्यायालय में ऐसे पद भरने के लिए मुक्त किया जा सकता है – ऐसे निदेश अनुच्छेद 229 तथा नियम 2क के भी विरुद्ध है तथा उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों की शक्ति से बाहर है क्योंकि नियुक्ति की शक्ति पूरी तरह मुख्य न्यायमूर्ति में निहित है – पूर्ण न्यायपीठ उन पदों को न्यायिक अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर न लाकर, उच्च न्यायालय के कर्मचारियों की प्रोन्नति करके भरने के लिए मुख्य न्यायमूर्ति को निदेश नहीं दे सकती थी – उच्च न्यायालय का प्रशासन चलाने की मुख्य न्यायमूर्ति की प्रशासनिक शक्तियां व्यापक हैं और किसी भी अन्य प्राधिकरण की भांति उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन हैं – वर्तमान में उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति की अनुच्छेद 229 के अधीन शक्ति उक्त अनुच्छेद 146 के अधीन भारत के मुख्य न्यायमूर्ति की शक्ति के समान है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – सैद्धांतिक प्रश्न – जो प्रश्न संबंधित रिट याचिका के विनिश्चय के लिए आवश्यक नहीं है उस पर अग्रसर होने की आवश्यकता नहीं है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 235, 229, 233 और 234 – व्याप्ति – उच्च न्यायालय और मुख्य न्यायमूर्ति की क्रमशः अनुच्छेद 235 और 229 के अधीन नियंत्रक शक्तियां भिन्न हैं – जबकि अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण उच्च न्यायालय में निहित है, उच्च न्यायालय का प्रशासन मुख्य न्यायमूर्ति में निहित है ।

प्रत्यर्थी सं. 2 की उप-रजिस्ट्रार के पद पर प्रोन्नति को चुनौती देते हुए प्रत्यर्थी सं. 1 की रिट याचिका का विनिश्चय राजस्थान उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा किया गया । प्रत्यर्थी सं. 2 ने वहां यह तर्क दिया कि यद्यपि उच्च न्यायालय के स्थापन के सभी पद, स्थापन के अधिकारियों से भरे जा सकते हैं, फिर उप-रजिस्ट्रार और

सब उच्च पद राजस्थान न्यायिक सेवा या राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा के अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर लाकर क्यों भरे जाते हैं जबकि अधीनस्थ न्यायालयों में अनेक पद खाली पड़े हैं जिससे उच्च न्यायालय के कर्मचारियों में ही कुंठा नहीं हो रही है बल्कि मुकदमे लड़ने वालों को भी परेशानी हो रही है। यद्यपि खंड न्यायपीठ के न्यायाधीशों का निष्कर्ष था कि यह बिन्दु रिट याचिका के विनिश्चय के लिए आवश्यक नहीं है फिर भी उसने इस बाबत रिपोर्ट देने के लिए और मुख्य न्यायमूर्ति के माध्यम से पूर्ण न्यायालय के समक्ष रखने के लिए रजिस्ट्रार को निदेश दिया जो यह विचार कर विनिश्चय करे कि क्या न्यायिक सेवा के अधिकारियों को उच्च न्यायालय में ऐसे पद भरने के लिए छोड़ा जा सकता है विशेषकर तब जबकि राज्य के विभिन्न जिलों में अनेक न्यायालय खाली पड़े हैं। उच्च न्यायालय की अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस प्रकार ये खंड अर्थात् यथासंशोधित कलकत्ता उच्च न्यायालय लेटर्स पेटेंट, 1865 के खण्ड 4 और खण्ड 8 मुख्य न्यायमूर्ति को कर्मचारियों को नियुक्त करने और उन्हें पद से हटाने की शक्तियां प्रदान करते हैं। इस शक्ति का प्रयोग उन नियमों और निर्बन्धनों के अधीन रहते हुए किया जाना था जो सपरिषद् गवर्नर जनरल द्वारा बनाए जाएं। जब भारत शासन अधिनियम, 1915 अधिनियमित हुआ तो अधिनियम की धारा 106 के परिणामस्वरूप वही स्थिति कायम रही। भारत शासन अधिनियम, 1935 द्वारा भी इस स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं किया गया। यह उल्लेख किया जाना चाहिए कि इस अधिनियम की धारा 241 में ऐसे विभिन्न प्राधिकारी विनिर्दिष्ट किए गए थे जो भारत के क्राउन के अधीन सिविल पद धारित करने वाले व्यक्तियों की नियुक्ति कर सकते थे और उनकी सेवा शर्तों से संबंधित नियम बना सकते थे। अतः जहां तक उच्च न्यायालय के कर्मचारिवृन्द का संबंध है, मुख्य न्यायमूर्ति सर्वोच्च प्राधिकारी बने रहे। यह स्पष्ट है कि यदि विधानमंडल ने इस अनुच्छेद में निर्दिष्ट कोई विधि नहीं बनाई है या राज्यपाल ने लोक सेवा आयोग से परामर्श करने की अपेक्षा करने वाला कोई नियम नहीं बनाया है तो मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियम स्वतंत्र रूप से प्रवृत्त होंगे और मुख्य न्यायमूर्ति राज्य लोक सेवा आयोग से परामर्श करने के भी अधीन नहीं होगा। अनुच्छेद 229 के अधीन नियुक्त करने की शक्ति का प्रयोग ऐसे न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा भी किया जा सकता है जिसे मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा निर्दिष्ट किया जाए। इसी प्रकार नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग भी किसी अन्य न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा किया जा सकता है यदि उसे मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा प्राधिकृत किया जाए। संविधान के अनुच्छेद 229 के अधीन उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति को उपलब्ध शक्ति अनुच्छेद 146 के अधीन भारत के मुख्य न्यायमूर्ति की शक्ति के सदृश है। (पैरा 12, 13, 14, 15, 20, 21, 22)

इस तथ्य के अलावा कि रजिस्ट्रार को दिए गए आक्षेपित निदेश अनुच्छेद 229 के प्रतिकूल हैं, वे अनुच्छेद 229 द्वारा मुख्य न्यायमूर्ति को प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाए गए राजस्थान उच्च न्यायालय (कर्मचारिवृन्द की सेवा शर्तें) नियम, 1953 के प्रभाव को भी नकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं। नियम 2 कर्मचारियों की संख्या विनिर्दिष्ट करता है। इसमें उपबंध है कि कर्मचारिवृन्द ऐसे पदों से मिलकर बनेगा जो नियमों से संलग्न अनुसूची I के स्तंभ 2 में विनिर्दिष्ट हों। इसमें यह भी उपबंध है कि मुख्य न्यायमूर्ति, समय-समय पर किसी पद को बिना भरे छोड़ सकेगा या उसे आस्थगन में रख सकेगा। नियमों में यह भी उपबंधित है कि मुख्य न्यायमूर्ति कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि या कमी कर सकेगा। यह नियम अनुध्यात करता है कि मुख्य न्यायमूर्ति कुछ पद अधीनस्थ न्यायालयों में से कुछ अधिकारियों का स्थानांतरण करके उनकी नियुक्ति द्वारा भर सकता है। अनुसूची I में रजिस्ट्रार, रजिस्ट्रार (सतर्कता) अपर रजिस्ट्रार, अपर रजिस्ट्रार (सतर्कता), अपर रजिस्ट्रार (रिट), विशेष कार्य अधिकारी (नियम), माननीय मुख्य न्यायमूर्ति का प्रधान निजी सचिव और उप-रजिस्ट्रार (न्यायिक) के पदों के सामने "आर.एच.जे.एस. काडर" शब्द उल्लिखित हैं जिसका अर्थ है कि केवल राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा के अधिकारी ही इन पदों पर नियुक्त किए जा सकते हैं। अतः संविधान के अनुच्छेद 229 के अधीन बनाए गए नियम ऐसे पद विनिर्दिष्ट करते हैं जिन पर

राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारी नियुक्त किए जाएंगे। भर्ती की रीति भी उपदर्शित की गई है। इन पदों पर सभी नियुक्तियां मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा की जाती हैं। ये नियम केवल मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा जिसे नियम बनाने की शक्ति प्राप्त है परिवर्तित, संशोधित या विखंडित किए जा सकते हैं। यदि आक्षेपित निदेशों का विश्लेषण इस पृष्ठभूमि में किया जाए तो यह पता चलेगा कि निदेशों का वास्तविक प्रयोजन न केवल अनुच्छेद 229 में अन्तर्विष्ट सांविधानिक उपबंधों बल्कि उस अनुच्छेद के अधीन मुख्य न्यायमूर्ति को उपलब्ध शक्तियों का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियमों को भी अभिभावी करना है। यदि रजिस्ट्रार को आक्षेपित निदेशों के अनुपालन में यह रिपोर्ट भी देनी हो कि ऐसे पदों पर, जिनपर राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों की प्रतिनियुक्ति पर नियुक्ति की जाती है, उच्च न्यायालय के कर्मचारी स्वयं ही भली-भांति कार्य कर सकते हैं या जब उपरोक्त पदों पर नियुक्ति के लिए अधिकारियों को जिला न्यायालयों से उच्च न्यायालयों में लाया जाता है तो कुछ अधीनस्थ न्यायालय रिक्त हो जाते हैं क्योंकि पीठासीन अधिकारियों के उच्च न्यायालय में प्रतिनियुक्ति पर भेज दिए जाने के फलस्वरूप वे उन न्यायालयों में लंबित मामलों की सुनवाई करने और उन्हें विनिश्चित करने के लिए उपलब्ध नहीं रहते और यदि ऐसी रिपोर्ट पूर्ण न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत कर भी दी जाती है तो क्या पूर्ण न्यायपीठ, मुख्य न्यायमूर्ति को उन पदों को प्रतिनियुक्ति पर उक्त अधिकारियों में से भरने के बजाय उच्च न्यायालय के कर्मचारियों में से प्रोन्नति द्वारा भरने के लिए निदेश दे सकती है ? इसका स्पष्ट उत्तर होगा, "नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।" उच्च न्यायालय का व्यष्टिक रूप में एक न्यायाधीश या एक साथ बैठने वाले सभी न्यायाधीश, जैसा कि पूर्ण न्यायपीठ में है, न तो सांविधानिक उपबंधों और न ही मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियमों में कोई परिवर्तन कर सकते हैं। उनकी यह अधिकारिता नहीं है कि वे किसी सांविधानिक संशोधन या मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियमों में संशोधन की बाबत कोई सुझाव दे सकें और न ही वे उच्च न्यायालय के कर्मचारियों की प्रोन्नति उन पदों पर करने के लिए कोई मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं जिन पर राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है। उच्च न्यायालय के प्रशासन को स्वतंत्र रूप से चलाने के लिए मुख्य न्यायमूर्ति में व्यापक शक्तियां निहित की गई हैं ताकि किसी भी रूप में उसमें हस्तक्षेप न किया जा सके चाहे वे उसके सहकर्मी ही क्यों न हों यद्यपि वे न्यायिक शाखा में किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा की गई कार्रवाई की भांति उसके द्वारा किए गए प्रशासनिक कार्यों और आदेशों की समीक्षा कर सकते हैं। इस बात को नजर अन्दाज नहीं किया जाना चाहिए कि रजिस्ट्रार, विभिन्न उच्च न्यायालयों के नियमों के अधीन, कुछ सीमित न्यायिक कृत्यों का भी निष्पादन करता है, जो उच्च न्यायालय स्थापन में किसी न्यायिक अधिकारी से भिन्न किसी अन्य अधिकारी द्वारा नहीं किए जा सकते। यह आक्षेपित निदेश कि क्या उच्च न्यायालय में ऐसे पदों पर, जिन पर अधिकारियों की नियुक्ति प्रतिनियुक्ति पर की जाती है उच्च न्यायालय के कर्मचारियों से कार्य लिया जा सकता है, उच्च न्यायालय का प्रशासन मुख्य न्यायमूर्ति में निहित करने वाले अनुच्छेद 229 के आज्ञापन के स्पष्ट रूप से प्रतिकूल है और उसके प्राधिकार पर अतिक्रमण आशयित है। (पैरा 28, 29, 30, 37)

एक अन्य पहलू और भी है। यदि उच्च न्यायालय नियमों के अधीन यह उपबंधित है कि कतिपय पद राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों में से भरे जाएंगे जिन्हें इन पदों पर प्रतिनियुक्ति के आधार पर नियुक्त किया जाएगा तो उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीश या न्यायालय के कर्मचारी संभवतया या तर्कसंगत रूप में कोई शिकायत नहीं कर सकते। नियुक्त करने की शक्ति अनन्य रूप से मुख्य न्यायमूर्ति में निहित होने के कारण इसका प्रयोग उच्च न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश द्वारा नहीं किया जा सकता। पश्चात्वर्ती अर्थात् अन्य न्यायाधीश उस शक्ति का प्रयोग अप्रत्यक्ष रूप से भी नहीं कर सकते जैसा कि वर्तमान मामले में करने का प्रयास किया गया है। माननीय न्यायाधीशों ने न्यायालय के रजिस्ट्रार को यह रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निदेश देकर कि क्या उन पदों का कार्य, जिनपर राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों की

नियुक्ति प्रतिनियुक्ति के आधार पर की जाती है, उच्च न्यायालय के कर्मचारियों द्वारा चलाया जा सकता है और यह भी निदेश देकर कि ऐसी रिपोर्ट को प्रशासनिक तौर पर अन्य न्यायाधीशों के विचारार्थ पूर्ण न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत किया जाए, उच्च न्यायालय स्थापन में कुछ ऐसे पदों पर नियुक्त करने की शक्ति का अप्रत्यक्षतः प्रयोग करने का प्रयोग किया है जिन पर नियुक्ति केवल मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा की जा सकती है । मामले का निपटारा करने वाले विद्वान् न्यायाधीशों की स्वयं भी यही राय थी कि उनके सामने लंबित रिट याचिका को प्रभावी रूप से विनिश्चित करने के लिए इस प्रश्न का विनिश्चित किया जाना अपेक्षित नहीं था । अतः उन्हें वहां रुकना चाहिए था और उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार को आक्षेपित निदेश देने के लिए अग्रसर नहीं होना चाहिए था विशेषतया इसलिए क्योंकि यह विश्वास करना कठिन है कि राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा का काडर इतना कमजोर और क्षीण है कि आठ अधिकारियों (नियमों के अधीन अधिकतम) के उच्च न्यायालय में प्रतिनियुक्ति पर नियुक्त किए जाने पर उनके स्थान पर अन्य अधिकारियों की व्यवस्था नहीं की जा सकती । (पैरा 31)

अनुच्छेद 235 से यह पता चलता है कि उच्च न्यायालय राज्य की न्यायिक सेवा के सदस्यों पर अपना प्रशासनिक, न्यायिक और अनुशासनिक नियंत्रण रखता है । अनुच्छेद में निर्दिष्ट "नियंत्रण" शब्द का प्रयोग व्यापक रूप में किया गया है जिसके अन्तर्गत अधीनस्थ न्यायालयों के कार्यकरण का साधारण अधीक्षण, अधीनस्थ न्यायालयों के पीठासीन अधिकारियों पर अनुशासनिक नियंत्रण और पदच्युति, हटाए जाने तथा रैंक में अवनति करने का दंड अधिरोपित करने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सिफारिश है । "नियंत्रण" में अनुशासनिक जांच के प्रयोजन के लिए न्यायिक सेवा के किसी सदस्य को निलंबित करना, उसका स्थानांतरण, पुष्टिकरण और प्रोन्नति भी सम्मिलित है । अतः महत्वपूर्ण यह है कि यद्यपि अनुच्छेद 235 में "उच्च न्यायालय" शब्द प्रयोग किया गया है, किंतु अनुच्छेद 229 में "मुख्य न्यायमूर्ति" शब्द का प्रयोग हुआ है । अतः संविधान, जहां तक "अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण" के उच्च न्यायालय में निहित होने का संबंध है उन्हें दो भिन्न परिकरण मानता है किंतु उच्च न्यायालय का प्रशासन मुख्य न्यायमूर्ति में निहित है । (पैरा 34, 36)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[1998]	(1998)1 एस. सी. सी. 1 : **राजस्थान राज्य** बनाम **प्रकाश चन्द** ;	27
[1990]	[1990] 4 उम. नि. प. 1 = ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 334 = [1989] 3 एस. सी. आर. 488 : **सुप्रीम कोर्ट एम्पलाइज वेलफेयर एसोसिएशन** बनाम **भारत संघ** ;	25
[1976]	ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 123 = [1976] 1 एस. सी. आर. 1008 : **आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **टी.गोपालकृष्णन मूर्ति और अन्य** ;	25
[1975]	ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 889 = (1975) 4 एस. सी. सी. 1 = [1975] 3 एस. सी. आर. 854 : **असम राज्य** बनाम **भूमन चन्द्र दत्त और अन्य** ;	24
[1971]	ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 1850 = [1971] सप्ली. एस. सी. आर. 420 : **एम.गुरुमूर्ति** बनाम **महालेखाकार, असम और नागालैंड एवं अन्य** ;	24
[1956]	ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 285 = [1955] 2 एस. सी. आर. 1331 : **प्रदयत कुमार घोष** बनाम **कलकत्ता उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति** ।	24

अनुमोदित निर्णय

इलाहाबाद वीकली केसेज़ 644 :
संजय कुमार श्रीवास्तव बनाम **कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति और अन्य ।** 26

निर्दिष्ट निर्णय

[1986] आई. एल. आर. 1986 एस. सी. 1388 = (1988) 3 एस. सी. सी. 211 :
रजिस्ट्रार, मद्रास उच्च न्यायालय बनाम **आर. रजियाह ;** 35

[1986] [1986] 4 उम. नि. प. 1018 = ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 1814 :
तेजपाल सिंह(मृतक) उसके विधिक प्रतिनिधियों की मार्फत बनाम
उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य ; 35

[1979] [1979] 1 उम. नि. प. 1220 = (1978) 2 एस. सी. सी. 102 :
उत्तर प्रदेश राज्य बनाम **बतुक देव पति त्रिपाठी ;** 34

[1979] ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 193 = [1979] 1 एस. सी. आर. 26 :
आंध्र प्रदेश के मुख्य न्यायमूर्ति और अन्य बनाम **एल.वी.ए. दिक्षितुलु ;** 34

[1978] [1978] 1 उम. नि. प. 889 = ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1619 :
गुजरात राज्य बनाम **रमेश चन्द्र मश्रुवाला ;** 34

[1977] [1977] 2 उम. नि. प. 1118 = ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 1841 :
हरियाणा राज्य बनाम **इन्द्र प्रकाश आनन्द ;** 34

[1969] (1969) 3 एस. सी. सी. 325 = 1970 एस. एल. आर. 911 :
जी.एस.नागमोता बनाम **मैसूर राज्य ;** 35

[1966] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 447 = [1966] 1 एस. सी. आर. 771 :
पश्चिमी बंगाल राज्य बनाम **निरपेंद्र नाथ बागची ।** 34

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 1994 की सिविल अपील सं. 835.

संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन सिविल अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री अरविंद वर्मा और एस. के. मेहता
प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से	श्री एस. के. भट्टाचार्य
मध्यक्षेपी की ओर से	सर्वश्री पल्लव शिशोदिया और ए. पी. मेध

न्यायालय का निर्णय माननीय न्यायमूर्ति एस. सगीर अहमद ने दिया ।

न्या. अहमद – दूसरों को न्याय देने वाला प्राधिकरण स्वयं, उप-रजिस्ट्रार के पद पर प्रत्यर्थी सं. 2 (संकल चन्द मेहता) की प्रोन्नति को चुनौती देते हुए प्रत्यर्थी सं. 1 (रमेश चन्द पालीवाल) द्वारा फाइल की गई रिट याचिका में इसी के दो न्यायाधीशों द्वारा तारीख 28.9.93 को दिए गए निर्णय से व्यथित होकर न्याय मांगने के लिए आज हमारे समक्ष आया है । प्रत्यर्थी सं. 1 ने न केवल मुख्य न्यायमूर्ति के तारीख 6.3.92 के उस आदेश को अभिखंडित करने की ईप्सा की है जिसके द्वारा संकल चन्द मेहता को उप-रजिस्ट्रार के पद पर प्रोन्नत किया गया था बल्कि

तारीख 11.5.90 के पूर्वतर स्थापन आदेश का संशोधन करने वाले मुख्य न्यायमूर्ति के तारीख 28.2.92 के आदेश को भी अभिखंडित करने का अनुरोध किया है ।

2. मुख्य न्यायमूर्ति ने संविधान के अनुच्छेद 229 के अधीन उसे प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए राजस्थान उच्च न्यायालय (कर्मचारिवृन्द की सेवा शर्तें) नियम, 1953 के नाम से जाने वाले नियम बनाए हैं जो समय-समय पर उनके द्वारा प्रशासनिक आदेशों से संशोधित किए जाते रहे हैं । प्रश्नगत पद पर प्रोन्नति इन्हीं नियमों द्वारा विनियमित होती है ।

3. वह रिक्ति जिस पर संकल चन्द मेहता को उप-रजिस्ट्रार के रूप में प्रोन्नत किया गया था, 31 जनवरी, 1992 को शम्भुचन्द मेहता के सेवानिवृत्त हो जाने के फलस्वरूप हुई थी । अतः उप-रजिस्ट्रार का पद तारीख 1 फरवरी, 1992 को रिक्त हुआ था । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इस रिक्ति को उन नियमों के अनुसार भरा जा सकता था जो उस तारीख को विद्यमान थे और चूंकि उस पद पर प्रत्यर्थी सं. 2 की प्रोन्नति तारीख 1.2.92 को विद्यमान नियमों के बजाए तारीख 28.2.92 को यथा संशोधित नियमों के अनुसार की गई थी इसलिए कथित प्रोन्नति अवैध थी । माननीय न्यायाधीशों ने आगे कहा कि सामान्य स्थिति में वे प्रत्यर्थी सं. 2 की उप-रजिस्ट्रार के पद पर नियुक्ति को अभिखंडित कर देते किंतु चूंकि उसे 30 सितंबर, 1993 को सेवानिवृत्त होना था, इसलिए उन्होंने ऐसा नहीं किया और यह निदेश दिया कि तारीख 1.10.1993 को होने वाली रिक्ति को तारीख 1.2.1992 को उपलब्ध रिक्ति माना जाए और उसे केवल निजी सचिवों के काडर में पात्र अधिकारियों पर विचार करके तारीख 11.5.90 के प्रशासनिक आदेश में अधिकथित नियमों के अनुसार भरा जाए । यह भी निदेश दिया गया था कि उप-रजिस्ट्रार के पद पर की गई नियुक्ति तारीख 6.3.92 से मानी जाएगी जबकि प्रत्यर्थी सं. 2 की अवैध रूप से उस पद पर प्रोन्नति कर दी गई थी । न्यायाधीशों ने मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा तारीख 28.2.92 के आदेश द्वारा नियमों में किए गए संशोधनों की विधिमान्यता का प्रश्न विनिश्चित नहीं किया था ।

4. हमें सूचित किया गया है कि जहां तक उप-रजिस्ट्रार के पद पर नियुक्ति का संबंध है, आक्षेपित निर्णय में अधिकथित निदेशों को क्रियान्वित कर दिया गया है और उप-रजिस्ट्रार के पद पर प्रोन्नति उन निदेशों के अनुसार कर दी गई है । अतः इस अपील में, न तो हमें अब उप-रजिस्ट्रार के पद पर की गई प्रोन्नति के संबंध में और न ही राजस्थान उच्च न्यायालय (कर्मचारिवृन्द की सेवा शर्तें) नियम, 1953 में तारीख 28.2.92 के आदेश द्वारा किए गए संशोधनों की विधिमान्यता पर विचार करना है ।

5. निर्णय के दौरान विद्वान् न्यायाधीशों ने मुख्य विषय से भटककर निम्नानुसार दो पृष्ठ लिख दिए :—

> "प्रत्यर्थी सं. 2 ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय के स्थापन के पद उच्च न्यायालय के स्थापन में उपलब्ध अधिकारियों में से भरे जा सकते हैं किंतु उच्च न्यायालय के स्थापन से संबंधित अधिकारियों की प्रोन्नति उप-रजिस्ट्रार के पद के ऊपर किसी अन्य पद के लिए नहीं की जाती है बल्कि उप-रजिस्ट्रार (न्यायिक) के रूप में पदाभिहित दो और माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के प्रधान निजी सचिव का एक पद राजस्थान न्यायिक सेवा और/या राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा के अधिकारियों में से प्रति नियुक्ति पर भरे जाते हैं जबकि तथ्य यह है कि राज्य के विभिन्न जिलों में अनेक न्यायालयों में अधिकारियों का अभाव है । यह निवेदन किया गया है कि इससे न केवल उच्च न्यायालय के स्थापन से संबंधित अधिकारियों को निराशा है बल्कि राज्य में मुकदमों में फंसे अनेक व्यक्ति अपने मामलों के विनिश्चयों में उनकी सेवाएं प्राप्त करने से वंचित रहते हैं ।
>
> हमारे विचार में, इस रिट याचिका के विनिश्चय के लिए प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा अभिलेख पर फाइल किए गए अतिरिक्त शपथपत्र में उठाए गए इस बिन्दु को विनिश्चित करना अपेक्षित नहीं है और अन्यथा भी हम, पर्याप्त सामग्री के अभाव में, इस पर विचार नहीं करेंगे ।

तथापि, हमारा यह मत है कि इसकी समीक्षा किया जाना आवश्यक है कि क्या उपरोक्त पद या उनमें से कुछ पद ऐसे हैं जिन पर उच्च न्यायालय के स्थापन से संबंधित अधिकारियों से काम नहीं लिया जा सकता और क्या राज्य में मुकदमा लड़ने वाले व्यक्तियों को न्यायिक अधिकारियों की सेवाओं और उनके अनुभव से वंचित करके ऐसे पदों को न्यायिक अधिकारियों को उच्च न्यायालय में प्रतिनियुक्ति पर बुलाकर भरा जाना आवश्यक है । अतः हम प्रत्यर्थी सं. 1 के रजिस्ट्रार को इस संबंध में यथासंभव शीघ्र एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार करके माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष प्रस्तुत करने का निदेश देते हैं ताकि इस पर पूर्ण न्यायपीठ में विचार किया जा सके और यह विनिश्चित किया जा सके कि क्या न्यायिक सेवाओं के अधिकारियों को उच्च न्यायालय के ऐसे पदों पर लगाया जाए विशेष रूप से ऐसी स्थिति में जबकि राज्य के विभिन्न जिलों में अनेक न्यायालयों में न्यायिक अधिकारियों का अभाव है ।"

6. इन उद्धरणों से पता चलता है कि उच्च न्यायालय के स्थापन में कुछ ऐसे पद थे जिनपर राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा के अधिकारियों की प्रतिनियुक्ति पर नियुक्ति की जाती थी जिस पर उच्च न्यायालय के कतिपय अधिकारियों ने इस आधार पर आपत्ति की थी कि वे उन पदों पर कार्य करने में सक्षम हैं और इसलिए राजस्थान न्यायिक सेवा या राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा के अधिकारियों को उन पदों पर नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए विशेषतः उस समय जब उनकी नियुक्ति से जिला न्यायालयों का न्यायिक कार्य प्रभावित होता हो और अधिक विशेषतः इसलिए कि उच्च न्यायालय के अधिकारियों को उप-रजिस्ट्रार के पद के ऊपर प्रोन्नति नहीं मिलती । विद्वान् न्यायाधीशों ने यह प्रश्न इसलिए विनिश्चित नहीं किया क्योंकि उनकी यह राय थी कि प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा फाइल की गई रिट याचिका के प्रभावी निपटारे के लिए इस प्रश्न का विनिश्चित किया जाना अपेक्षित नहीं था । उनका यह भी विचार था कि अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध न होने के कारण इस प्रश्न पर उनके द्वारा विचार किया जाना उचित नहीं होगा । फिर भी, उन्होंने रजिस्ट्रार को यह रिपोर्ट तैयार करने के निदेश दिए थे कि क्या उन पदों पर जहां राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी उच्च न्यायालय के कर्मचारी कार्य करने में सक्षम हैं और क्या उन अधिकारियों को प्रतिनियुक्ति पर नियुक्त किए जाने से जिला न्यायालय का न्यायिक कार्य प्रभावित होता है क्योंकि मुकदमे लड़ने वाली जनता उनकी सेवाओं से वंचित हो जाती है और उनके द्वारा पीठासित न्यायालय लम्बी अवधि तक रिक्त पड़े रहते हैं । इस रिपोर्ट को पूर्ण न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत किए जाने का निदेश दिया गया था ताकि मामले पर विचार करके कोई विनिश्चय लिया जा सके ।

7. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने दलील दी है कि याचिका में उठाए गए मुख्य विवाद का विनिश्चय करने, मामले के इस पहलू की उपेक्षा करने और आक्षेपित निदेश जारी करने, विशेषतः तब जब वह संविधान के अनुच्छेद 229 के उपबंधों के प्रतिकूल हो तथा मुख्य न्यायमूर्ति के प्राधिकार को कम करने के लिए राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सक्षम नहीं थे ।

8. मुख्य न्यायमूर्ति व उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों की प्रास्थिति, शक्तियों और प्राधिकार का तथा उनकी सांविधानिक हैसियत का भी मूल्यांकन करने और समझने के लिए अभिलेखागार का अवलंब लेना आवश्यक है ।

9. ब्रिटिश सरकार ने 1774 में जारी चार्टर द्वारा कलकत्ता उच्चतम न्यायालय की स्थापना की थी । चार्टर का खंड 10, अन्य बातों के साथ-साथ,–

"समय-समय पर, जैसा अपेक्षित हो, इतने लिपिक और अन्य अनुसचिवीय अधिकारी जो न्याय प्रशासन के लिए आवश्यक हों, नियुक्त करने के लिए प्राधिकृत और सशक्त करता है ।"

10. कलकत्ता उच्चतम न्यायालय के स्थान पर उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861 के अधीन स्थापित उच्च न्यायालय गठित कर दिया गया । अधिनियम की धारा 9 निम्नानुसार उपबंध करती है :–

"अधिनियम के अधीन स्थापित किए जाने वाले प्रत्येक उच्च न्यायालय को ऐसी अधिकारिता होगी और वह ऐसी अधिकारिता और ऐसी प्रत्येक शक्ति एवं प्राधिकार का प्रयोग करेगा जो किसी भी रूप में अधिनियम के अधीन समाप्त किए जाने वाले न्यायालय में निहित थे ।"

11. कलकत्ता उच्च न्यायालय का लेटर्स पेटेन्ट 1865 में मंजूर किया गया था । 1919 में यथा संशोधित लेटर्स पेटेंट 1865 के खण्ड 4 और खण्ड 8 में यह उपबंध है :—

"4. हम यह स्थापित करते हैं और आदेश करते हैं कि चौदह मई, एक हजार आठ सौ बासठ के लेटर्स पेटेंट के परिणामस्वरूप फोर्ट विलियम, बंगाल स्थित उच्च न्यायालय में नियुक्त प्रत्येक लिपिक और अनुसचिवीय अधिकारी अपना पद और नियोजन उससे सम्बद्ध वेतन के साथ उस समय तक धारित किए रहेगा जब तक कि उसे ऐसे पद और नियोजन से हटाया नहीं जाता; और वह हटाए जाने की शक्ति, विनियमों और उपबंधों से उसी प्रकार अधीन होगा जैसे कि उसे इन लेटर्स पेटेंट के परिणामस्वरूप ही नियुक्त किया गया हो ।

8. हम फोर्ट विलियम, बंगाल स्थित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति को, समय-समय पर, जैसा कि अपेक्षित हो, और सपरिषद गवर्नर जनरल द्वारा विहित नियमों और निर्बन्धनों के अधीन, इतने लिपिक और अन्य अनुसचिवीय अधिकारी, जो न्याय प्रशासन और हमारे इन लेटर्स पेटेंट द्वारा उक्त उच्च न्यायालय को प्रदत्त एवं उसे सुपुर्द की गई सभी शक्तियों और प्राधिकारों के सम्यक् निष्पादन के लिए आवश्यक हों, नियुक्त करने के लिए प्राधिकृत और सशक्त करते हैं और हमारी यह भी इच्छा और चाह है एवं हम अपनी, अपने वारिसों तथा अपने उत्तराधिकारियों की ओर से यह निदेश, आदेश और नियत करते हैं कि उपरोक्तानुसार नियुक्त प्रत्येक लिपिक और अधिकारी क्रमश: ऐसा युक्तियुक्त वेतन प्राप्त करेगा जो मुख्य न्यायमूर्ति समय-समय पर प्रत्येक पद के लिए नियत करे और सपरिषद गवर्नर जनरल अनुमोदन करे.................।"

12. इस प्रकार ये खंड मुख्य न्यायमूर्ति को कर्मचारियों को नियुक्त करने और उन्हें पद से हटाने की शक्तियां प्रदान करते हैं । इस शक्ति का प्रयोग उन नियमों और निर्बन्धनों के अधीन रहते हुए किया जाना था जो सपरिषद गवर्नर जनरल द्वारा बनाए जाएं ।

13. जब भारत शासन अधिनियम, 1915 अधिनियमित हुआ तो अधिनियम की धारा 106 के परिणामस्वरूप वही स्थिति कायम रही जो अन्य बातों के साथ-साथ निम्नानुसार उपबंध करती है :—

"विभिन्न उच्च न्यायालयों को न्याय प्रशासन पर या उसके संबंध में वही समस्त शक्तियां और प्राधिकार प्राप्त होंगे जैसा कि उनमें लेटर्स पेटेंट द्वारा निहित हैं और इसके अन्तर्गत न्यायालय के लिपिकों और अन्य अनुसचिवीय अधिकारियों को नियुक्त करने की भी शक्ति है ....।"

14. भारत शासन अधिनियम, 1935 द्वारा भी इस स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं किया गया । यह उल्लेख किया जाना चाहिए कि इस अधिनियम की धारा 241 में ऐसे विभिन्न प्राधिकारी विनिर्दिष्ट किए गए थे जो भारत के क्राउन के अधीन सिविल पद धारित करने वाले व्यक्तियों की नियुक्ति कर सकते थे और उनकी सेवा शर्तों से संबंधित नियम बना सकते थे । किंतु धारा 242(4) में विनिर्दिष्ट रूप से निम्नलिखित उपबंध था :—

"(4) इसे नियुक्तियों और उन पर कार्यरत व्यक्तियों, फेडरल न्यायालय से सम्बद्ध कर्मचारिवृन्द को लागू करने में अंतिम पूर्ववर्ती धारा का प्रभाव ऐसा होगा जैसे कि फेडरल न्यायालय के मामले में उपधारा (1) के पैरा (क), उपधारा (2) के पैरा (क) और उपधारा (5) में गवर्नर जनरल के निर्देश के स्थान पर भारत के मुख्य न्यायमूर्ति के निर्देश से हो; उच्च न्यायालय के मामले में उपधारा (1) के पैरा (ख), उपधारा (2) के

पैरा (ख) और उपधारा (5) में गवर्नर जनरल के निर्देश के स्थान पर न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के निर्देश से हो;

परन्तु यह कि –

(क) गवर्नर, अपने विवेकानुसार यह अपेक्षा कर सकेगा कि ऐसी किन्ही दशाओं में जिन्हें वह अपने विवेक से निदेशित करे, किसी ऐसे व्यक्ति को जो पहले से ही न्यायालय से संलग्न नहीं है न्यायालय से संबंधित किसी पद पर प्रांतीय लोक सेवा आयोग से परामर्श करके ही नियुक्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

(ख) मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा उक्त उपधारा (2) के अधीन बनाए गए नियमों का, जहां तक उनका संबंध वेतन, भत्ते, छुट्टी या पेंशन से है, अनुमोदन, यथास्थिति, गवर्नर जनरल या गवर्नर से कराना अपेक्षित है।"

15. अतः जहां तक उच्च न्यायालय के कर्मचारिवृन्द का संबंध है, मुख्य न्यायमूर्ति सर्वोच्च प्राधिकारी बने रहे।

16. जब संविधान अस्तित्व में आया तो दोनों अधिनियमों अर्थात् 1915 और 1935 के भारत शासन अधिनियमों में यथा उपलब्ध मुख्य न्यायमूर्ति की शक्तियों और प्रास्थिति को कायम रखा गया ।

17. संविधान का अध्याय 5 "राज्यों के उच्च न्यायालयों" से संबंधित है । सांविधानिक स्कीम के अधीन प्रत्येक राज्य के लिए एक उच्च न्यायालय होगा । (देखिए अनुच्छेद 214) अनुच्छेद 216 यह उपबंध करता है कि प्रत्येक उच्च न्यायालय मुख्य न्यायमूर्ति और ऐसे अन्य न्यायाधीशों से मिलकर बनेगा जिन्हें राष्ट्रपति समय-समय पर नियुक्त करना आवश्यक समझे । अनुच्छेद 223 यह उपबंध करता है कि जब किसी उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति का पद रिक्त है या जब ऐसा मुख्य न्यायमूर्ति अनुपस्थिति के कारण या अन्यथा अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तब न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों में से ऐसा एक न्यायाधीश, जिसे राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा । अनुच्छेद 229 निम्नानुसार उपबंध करता है :–

"229. उच्च न्यायालयों के अधिकारी और सेवक तथा व्यय -- (1) किसी उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्तियां उस न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति करेगा या उस न्यायालय का ऐसा अन्य न्यायाधीश या अधिकारी करेगा जिसे वह निदिष्ट करे:

परंतु उस राज्य का राज्यपाल नियम द्वारा यह अपेक्षा कर सकेगा कि ऐसी किन्हीं दशाओं में जो नियम में विनिर्दिष्ट की जाएं किसी ऐसे व्यक्ति को, जो पहले से ही न्यायालय से संलग्न नहीं है, न्यायालय से संबंधित किसी पद पर राज्य लोक सेवा आयोग से परामर्श करके ही नियुक्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(2) राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की सेवा की शर्तें ऐसी होंगी जो उस न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति या उस न्यायालय के ऐसे अन्य न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा जिसे मुख्य न्यायमूर्ति ने इस प्रयोजन के लिए नियम बनाने के लिए प्राधिकृत किया है, बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाएं:

परंतु इस खंड के अधीन बनाए गए नियमों के लिए, जहां तक वे वेतनों, भत्तों, छुट्टी या पेंशनों से संबंधित हैं, उस राज्य के राज्यपाल के अनुमोदन की अपेक्षा होगी ।

(3) उच्च न्यायालय के प्रशासनिक व्यय, जिनके अंतर्गत उस न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों को या उनके संबंध में संदेय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, राज्य की संचित निधि पर भारित होंगे और उस न्यायालय द्वारा ली गई फीसें और अन्य धनराशियां उस निधि का भाग होंगी ।"

18. यह अनुच्छेद उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति को उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्तियों के मामले में सर्वोच्च प्राधिकारी बनाता है । यह अनुच्छेद मुख्य न्यायमूर्ति को, उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की सेवा शर्तों के विनियमन के लिए इस शर्त के अधीन बनाने की शक्तियां प्रदत्त करता है कि यदि नियम, वेतन, भत्ते, छुट्टी या पेंशन से संबंधित हैं तो उनका राज्य के राज्यपाल द्वारा अनुमोदन अपेक्षित है । यदि राज्य के विधान मंडल ने कोई विधि बनाई है तो मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियम उस विधि की शर्तों के अधीन प्रवृत्त होंगे ।

19. मुख्य न्यायमूर्ति की नियम बनाने की शक्ति निम्नलिखित तीन निर्बन्धनों के अधीन है :—

(i) यदि नियम वेतन, भत्ते, छुट्टी या पेंशन से संबंधित हैं तो उनका राज्य के राज्यपाल द्वारा अनुमोदन अपेक्षित है ।

(ii) यदि राज्य के विधान मंडल ने कोई विधि बनाई है तो मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियम उस विधि के अधीन प्रवृत्त होंगे ।

(iii) यदि राज्य के राज्यपाल ने, नियमों द्वारा, यह उपबंधित किया है कि किसी ऐसे व्यक्ति को जो पहले से ही न्यायालय से संलग्न नहीं हैं, न्यायालय से संबंधित किसी पद पर राज्य लोक सेवा आयोग के परामर्श से ही नियुक्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं, तो मुख्य न्यायमूर्ति ऐसे पद पर नियुक्ति करते समय पहले राज्य लोक सेवा आयोग से परामर्श करेगा ।

20. यह स्पष्ट है कि यदि विधानमंडल ने इस अनुच्छेद में निर्दिष्ट कोई विधि नहीं बनाई है या राज्यपाल ने लोक सेवा आयोग से परामर्श करने की अपेक्षा करने वाला कोई नियम नहीं बनाया है तो मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियम स्वतंत्र रूप से प्रवृत्त होंगे और मुख्य न्यायमूर्ति राज्य लोक सेवा आयोग से परामर्श करने के भी अधीन नहीं होगा ।

21. अनुच्छेद 229 के अधीन नियुक्त करने की शक्ति का प्रयोग ऐसे न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा भी किया जा सकता है जिसे मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा निर्दिष्ट किया जाए । इसी प्रकार नियम बनाने की शक्ति का प्रयोग भी किसी अन्य न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा किया जा सकता है यदि उसे मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा प्राधिकृत किया जाए ।

22. संविधान के अनुच्छेद 229 के अधीन उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति को उपलब्ध शक्ति अनुच्छेद 146 के अधीन भारत के मुख्य न्यायमूर्ति की शक्ति के सदृश है । अनुच्छेद 146 निम्नानुसार है :—

"उच्चतम न्यायालय के अधिकारी और सेवक तथा व्यय — (1) उच्चतम न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्तियां भारत का मुख्य न्यायमूर्ति करेगा या उस न्यायालय का ऐसा अन्य न्यायाधीश या अधिकारी करेगा जिसे वह निदिष्ट करे :

परंतु राष्ट्रपति नियम द्वारा यह अपेक्षा कर सकेगा कि ऐसी किन्हीं दशाओं में, जो नियम में विनिर्दिष्ट की जाएं, किसी ऐसे व्यक्ति को, जो पहले से ही न्यायालय से संलग्न नहीं है, न्यायालय से संबंधित किसी पद पर संघ लोक सेवा आयोग से परामर्श करके ही नियुक्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(2) संसद् द्वारा बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की सेवा की शर्तें ऐसी होंगी जो भारत के मुख्य न्यायमूर्ति या उस न्यायालय के ऐसे अन्य न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा, जिसे भारत के मुख्य न्यायमूर्ति ने इस प्रयोजन के लिए नियम बनाने के लिए प्राधिकृत किया है, बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाएं :

परंतु इस खंड के अधीन बनाए गए नियमों के लिए, जहां तक वे वेतनों, भत्तों, छुट्टी या पेंशनों से संबंधित हैं, राष्ट्रपति के अनुमोदन की अपेक्षा होगी ।

(3) उच्चतम न्यायालय के प्रशासनिक व्यय, जिनके अंतर्गत उस न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों को या उनके संबंध में संदेय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होंगे और उस न्यायालय द्वारा ली गई फीसें और अन्य धनराशियां उस निधि का भाग होंगी ।"

23. जिस प्रकार से भारत के मुख्य न्यायमूर्ति, उच्चतम न्यायालय स्थापन के मामलों में, जिसके अन्तर्गत इसके कार्यालय के कर्मचारी और अधिकारी भी हैं, उच्चतम प्राधिकारी हैं उसी प्रकार से उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति भी इन मामलों में एकमात्र प्राधिकारी है और कोई अन्य न्यायाधीश या अधिकारी उन प्रशासनिक कृत्यों या शक्ति को विधिक रूप से ग्रहण नहीं कर सकता ।

24. किसी अधिकारी या सेवक को नियुक्त करने की शक्ति में उसे पदच्युत करने की शक्ति भी सम्मिलित है जैसा कि **प्रदयत कुमार घोष** बनाम **कलकत्ता उच्च न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायमूर्ति**[1] वाले मामले में निर्धारित किया गया था । उस मामले में यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि उच्च न्यायालय की आरम्भिक शाखा के रजिस्ट्रार को पदच्युत करने के पहले मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग से परामर्श करना आवश्यक नहीं हैं । **एम. गुरुमूर्ति** बनाम **महालेखाकार, असम और नागालैंड एवं अन्य**[2] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्ति के मामले में मुख्य न्यायमूर्ति उच्चतम प्राधिकारी है और इसमें कार्यपालिका द्वारा अनुच्छेद 229 में उपदर्शित सीमित सीमा के सिवाए कोई हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता । तथापि, यदि मामला और इसमें कार्यपालिका द्वारा अनुच्छेद 229 में उपदर्शित सीमित सीमा वेतन नियतन से संबंधित है तो राज्य के राज्यपाल द्वारा इसका अनुमोदन किया जाना आवश्यक है । [देखिए **असम राज्य** बनाम **भूमन चन्द्र दत्त और अन्य**[3]]

25. चूंकि संविधान के अधीन मुख्य न्यायमूर्ति को उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की सेवा शर्तों को विनियमित करने के लिए नियम बनाने की शक्ति भी प्राप्त है, अतः यह स्पष्ट है कि वह किसी विशिष्ट पद के लिए संदेय वेतनमान भी विहित कर सकता है । इसमें वेतनमान पुनरीक्षित करने की शक्ति भी सम्मिलित है । चूंकि ऐसे नियम में वित्त शामिल होता है, इसलिए संविधान में यह उपबंध किया गया है कि इसके लिए राज्यपाल, दूसरे शब्दों में राज्य सरकार का अनुमोदन अपेक्षित है । इस न्यायालय ने **आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **टी. गोपालकृष्णन मूर्ति और अन्य**[4] वाले मामले में यह आशा व्यक्त की थी कि "मामले की उपयुक्तता और अनुच्छेद 229 के भाव को ध्यान में रखते हुए यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि अनुमोदन सामान्यतया और साधारणतया प्राप्त हो जाएगा ।" इस न्यायालय द्वारा सुप्रीम कोर्ट **एम्पलाइज वेलफेयर एसोसिएशन** बनाम **भारत संघ**[5] वाले मामले में इसे दोहराया गया था । हम पुनः इस बात को दोहराते हैं तथा आशा करते हैं कि यदि उच्च न्यायालय के प्रशासन के हित में मुख्य न्यायमूर्ति कोई प्रगतिशील कार्यवाही विशेषतः उसके अधीन कार्यरत अधिकारियों और कर्मचारियों की सेवा शर्तों के सुधारने के संबंध में करता है तो राज्य सरकार शायद ही पदों के सृजन की स्वीकृति देने या उस पद के लिए संदेय वेतन के नियतन या वेतनमान पुनरीक्षित करने की सिफारिश की बाबत, यदि सरकार ने उसके समकक्ष पद का वेतनमान पुनरीक्षित कर दिया है, कोई आक्षेप करेगी ।

---

[1] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 285 = [1955] 2 एस. सी. आर. 1331.

[2] ए. आई. आर. 1971 एस. सी. 1850 = [1971] सप्ली. एस. सी. आर. 420.

[3] ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 889 = (1975) 4 एस. सी. सी. 1 = [1975] 3 एस. सी.आर. 854.

[4] ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 123 = [1976] 1 एस. सी. आर. 1008.

[5] [1990] 4 उम. नि. प. 1 = ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 334 = [1989] 3 एस. सी. आर. 488 .

26. **संजय कुमार श्रीवास्तव** बनाम **कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति और अन्य**[1] वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने जिसमें हम में से एक (न्या. एस.सगीर अहमद) उसके सदस्य थे, उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति व अन्य न्यायाधीशों की प्रास्थिति, कृत्यों और कर्तव्यों पर विचार किया था जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ निम्नानुसार मताभिव्यक्ति की गई थी :—

> "मुख्य न्यायमूर्ति किसी मामले या मामले की सुनवाई करने वाली न्यायपीठ द्वारा प्रतिपादित किसी विधि के प्रश्न को विनिश्चित करने के लिए दो या अधिक न्यायाधीशों की न्यायपीठ गठित कर सकता है । पश्चात्‌वर्ती वाले मामले में ऐसी न्यायपीठ का प्रतिपादित प्रश्न पर विनिश्चय मामले की सुनवाई करने वाली न्यायपीठ को वापस कर दिया जाएगा और वह न्यायपीठ उस प्रश्न पर दिए गए विनिश्चय का अनुसरण करेगी और उसमें शेष प्रश्न, यदि कोई हो, विनिश्चित करने के पश्चात् मामले का निपटारा करेगी।"

यह मताभिव्यक्ति भी की गई थी :—

> "न्यायालय के नियमों के अध्याय 5 के नियम 6 के अधीन एक आवेदन द्वारा या अन्यथा मुख्य न्यायमूर्ति की जानकारी में यह बात भलीभांति लाई जा सकती है कि किसी मामले में कोई महत्वपूर्ण प्रश्न अन्तर्वलित होने के परिणामस्वरूप या उस मामले में विचारार्थ बिन्दु पर विरोधी विनिश्चय होने के कारण उसका वृहत्तर न्यायपीठ द्वारा सुना जाना अपेक्षित है । यदि मुख्य न्यायमूर्ति उसके समक्ष न्यायालय नियमों के अध्याय 5 के नियम 6 के अधीन प्रस्तुत आवेदन का संज्ञान लेता है और मामले के विनिश्चय के लिए दो या अधिक न्यायाधीशों की न्यायपीठ गठित करता है तो यह नहीं कहा जा सकता कि उसने किन्हीं कानूनी उपबंधों का अतिक्रमण किया है ।"

पूर्ण न्यायपीठ ने यह मताभिव्यक्ति भी की थी :—

> "उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए यह स्पष्ट है कि मुख्य न्यायमूर्ति को न केवल संविधान के अधीन, बल्कि संविधान के अनुच्छेद 225 के अधीन प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में बनाए गए नियमों के अधीन भी एक विशेष प्रास्थिति प्राप्त है । केवल वह ही अकेले पीठासित होने वाले और खंड न्यायपीठ या पूर्ण न्यायपीठ में बैठने वाले न्यायाधीश के कार्य समनुदेशित कर सकता है । केवल उसे ही यह विनिश्चित करने की अधिकारिता प्राप्त है कि कौन सा मामला एकल न्यायाधीश द्वारा सुना जाएगा और किस मामले की सुनवाई दो या अधिक न्यायाधीश करेंगे ।
>
> इस शक्ति का अनन्य रूप से मुख्य न्यायमूर्ति को प्रदत्त किया जाना आवश्यक है ताकि एकल न्यायाधीश या खंड न्यायपीठ आदि के न्यायाधीशों से मिलकर बने अनेक न्यायालय समन्वित रूप से कार्य कर सकें और एक न्यायालय की अधिकारिता पर दूसरे न्यायालय अधिकारिता अतिव्याप्त न हो जाए । यदि न्यायाधीश अपनी अधिकारिता का चयन करने के लिए मुक्त होते या उन्हें इसकी स्वतंत्रता होती कि वे जिस मामले को चाहें उसे सुनकर विनिश्चित करें तो न्यायालय का तंत्र बिखर जाता और किसी विशिष्ट अधिकारिता अथवा विशिष्ट मामले में दिलचस्पी के कारण अंतरिक कलह उत्पन्न होने से न्यायालय का कार्यकरण जारी नहीं रह सकेगा । न्यायालय के उचित कार्यकरण का केन्द्र न्यायाधीशों का "आत्म" और "न्यायिक" अनुशासन है जिसे नियमों द्वारा मुख्य न्यायमूर्ति को न्यायाधीशों को कार्य आबंटित करने और उनकी अधिकारिता तथा बैठकों को विनियमित करने के पूर्ण प्राधिकार देकर प्राप्त करने की ईप्सा की गई है ।"

---

[1] इलाहाबाद वीकली केसेज़ 644.

27. इस विनिश्चय का **राजस्थान राज्य** बनाम **प्रकाश चन्द**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय से अनुमोदन हो गया है और वह मामला भी राजस्थान उच्च न्यायालय का ही है, जहां से फाइल की गई अपील हमारे समक्ष है ।

28. इस तथ्य के अलावा कि रजिस्ट्रार को दिए गए आक्षेपित निदेश अनुच्छेद 229 के प्रतिकूल हैं, वे अनुच्छेद 229 द्वारा मुख्य न्यायमूर्ति को प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए बनाए गए राजस्थान उच्च न्यायालय (कर्मचारिवृन्द की सेवा शर्तें) नियम, 1953 के प्रभाव को भी नकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं । नियम 2 कर्मचारियों की संख्या विनिर्दिष्ट करता है । इसमें उपबंध है कि कर्मचारिवृन्द ऐसे पदों से मिलकर बनेगा जो नियमों से संलग्न अनुसूची I के स्तंभ 2 में विनिर्दिष्ट हों । इसमें यह भी उपबंध है कि मुख्य न्यायमूर्ति, समय-समय पर किसी पद को बिना भरे छोड़ सकेगा या उसे आस्थगन में रख सकेगा । नियमों में यह भी उपबंधित है कि मुख्य न्यायमूर्ति कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि या कमी कर सकेगा । भर्ती की रीति नियम 2क में निम्नानुसार विनिर्दिष्ट की गई है :--

"**2क. भर्ती की रीति** -- (1) अनुसूची 1 के स्तंभ 2 में विनिर्दिष्ट पद या पदों के प्रवर्ग पर भर्ती निम्नलिखित में से किसी एक या अधिक रीतियों में की जाएगी, अर्थात्, —

(क) सीधी भर्ती द्वारा; या

(ख) उच्च न्यायालय में पहले से नियोजित किसी व्यक्ति की प्रोन्नति द्वारा; या

(ग) अधीनस्थ न्यायालयों या राज्य सरकार के कार्यालयों में से स्थानांतरण द्वारा :

परन्तु मुख्य न्यायमूर्ति या मुख्य न्यायमूर्ति के किसी साधारण या विशेष आदेश के अधीन रहते हुए रजिस्ट्रार उच्च न्यायालय के स्थापन पर कार्यरत् अनुसचिवीय या चतुर्थ श्रेणी कर्मचारिवृन्द के किसी सदस्य के उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय में स्थानांतरण का या इसके विपरीत आदेश ऐसी शर्तों या निबंधनों पर कर सकेगा जो वह उचित समझे ।

(2) मुख्य न्यायमूर्ति, समय-समय पर, साधारण या विशेष आदेश द्वारा :-

(क) ऐसी रीति विनिर्दिष्ट कर सकेगा जिसके द्वारा किसी पद या पदों के किसी प्रवर्ग पर भर्ती की जा सके;

(ख) एक से अधिक रीति में भर्ती करने की स्थिति में, प्रत्येक रीति से भरी जाने वाली रिक्तियों का अनुपात अवधारित करेगा ;

(ग) सीधी भर्ती की दशा में, ऐसी रीति विनिर्दिष्ट करेगा जिसमें वह भर्ती की जाएगी ।

(3) न्यायालय अधिकारी के पद पर भर्ती (कर्मचारिवृन्द में से चयन द्वारा) सीधी भर्ती द्वारा ऐसी रीति के अनुसार की जाएगी जो मुख्य न्यायमूर्ति विहित करे ।"

29. यह नियम अनुध्यात करता है कि मुख्य न्यायमूर्ति कुछ पद अधीनस्थ न्यायालयों में से कुछ अधिकारियों का स्थानांतरण करके उनकी नियुक्ति द्वारा भरें सकता है । अनुसूची I में रजिस्ट्रार, रजिस्ट्रार (सतर्कता) अपर रजिस्ट्रार, अपर रजिस्ट्रार (सतर्कता), अपर रजिस्ट्रार (रिट), विशेष कार्य अधिकारी (नियम), माननीय मुख्य न्यायमूर्ति का प्रधान निजी सचिव और उप-रजिस्ट्रार (न्यायिक) के पदों के सामने "आर.एच.जे.एस. काडर" शब्द उल्लिखित हैं

---

[1](1998) 1 एस. सी. सी. 1.

जिसका अर्थ है कि केवल राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा के अधिकारी ही इन पदों पर नियुक्त किए जा सकते हैं । अतः संविधान के अनुच्छेद 229 के अधीन बनाए गए नियम ऐसे पद विनिर्दिष्ट करते हैं जिनपर राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारी नियुक्त किए जाएंगे । भर्ती की रीति भी उपदर्शित की गई है । इन पदों पर सभी नियुक्तियां मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा की जाती हैं । ये नियम केवल मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा, जिसे नियम बनाने की शक्ति प्राप्त है, परिवर्तित, संशोधित या विखंडित किए जा सकते हैं ।

30. यदि आक्षेपित निदेशों का विश्लेषण इस पृष्ठभूमि में किया जाए तो यह पता चलेगा किन निदेशों का वास्तविक प्रयोजन न केवल अनुच्छेद 229 में अन्तर्विष्ट सांविधानिक उपबंधों बल्कि उस अनुच्छेद के अधीन मुख्य न्यायमूर्ति को उपलब्ध शक्तियों का प्रयोग करते हुए बनाए गए नियमों को भी अभिभावी करना है । यदि रजिस्ट्रार को आक्षेपित निदेशों के अनुपालन में यह रिपोर्ट भी देनी हो कि ऐसे पदों पर, जिनपर राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों की प्रतिनियुक्ति पर नियुक्ति की जाती है, उच्च न्यायालय के कर्मचारी स्वयं ही भलीभांति कार्य कर सकते हैं या जब उपरोक्त पदों पर नियुक्ति के लिए अधिकारियों को जिला न्यायालयों से उच्च न्यायालयों में लाया जाता है तो कुछ अधीनस्थ न्यायालय रिक्त हो जाते हैं क्योंकि पीठासीन अधिकारियों के उच्च न्यायालय में प्रतिनियुक्ति पर भेज दिए जाने के फलस्वरूप वे उन न्यायालयों में लंबित मामलों की सुनवाई करने और उन्हें विनिश्चित करने के लिए उपलब्ध नहीं रहते और यदि ऐसी रिपोर्ट पूर्ण न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत कर भी दी जाती है तो क्या पूर्ण न्यायपीठ, मुख्य न्यायमूर्ति को उन पदों को प्रतिनियुक्ति पर उक्त अधिकारियों में से भरने के बजाए उच्च न्यायालय के कर्मचारियों में से प्रोन्नति द्वारा भरने के लिए निदेश दे सकती है? इसका स्पष्ट उत्तर होगा, "नहीं, ऐसा नहीं हो सकता ।" उच्च न्यायालय का व्यष्टिक रूप में एक न्यायाधीश या एक साथ बैठने वाले सभी न्यायाधीश, जैसा कि पूर्ण न्यायपीठ में है, न तो सांविधानिक उपबंधों और न ही मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियमों में कोई परिवर्तन कर सकते हैं । उनकी यह अधिकारिता नहीं है कि वे किसी सांविधानिक संशोधन या मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा बनाए गए नियमों में संशोधन की बाबत कोई सुझाव दे सकें और न ही वे उच्च न्यायालय के कर्मचारियों की प्रोन्नति उन पदों पर करने के लिए कोई मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं जिनपर राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है । उच्च न्यायालय के प्रशासन को स्वतंत्र रूप से चलाने के लिए मुख्य न्यायमूर्ति में व्यापक शक्तियां निहित की गई हैं ताकि किसी भी रूप में उसमें हस्तक्षेप न किया जा सके चाहे वे उसके सहकर्मी ही क्यों न हों यद्यपि वे न्यायिक शाखा में किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा की गई कार्रवाई की भांति उसके द्वारा किए गए प्रशासनिक कार्यों और आदेशों की समीक्षा कर सकते हैं । इस बात को नजर अन्दाज नहीं किया जाना चाहिए कि रजिस्ट्रार, विभिन्न उच्च न्यायालयों के नियमों के अधीन, कुछ सीमित न्यायिक कृत्यों का भी निष्पादन करता है, जो उच्च न्यायालय स्थापन में किसी न्यायिक अधिकारी से भिन्न किसी अन्य अधिकारी द्वारा नहीं किए जा सकते ।

31. एक अन्य पहलू और भी है । यदि उच्च न्यायालय नियमों के अधीन यह उपबंधित है कि कतिपय पद राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों में से भरे जाएंगे जिन्हें इन पदों पर प्रतिनियुक्ति के आधार पर नियुक्त किया जाएगा तो उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीश या न्यायालय के कर्मचारी संभवतया या तर्कसंगत रूप में कोई शिकायत नहीं कर सकते । नियुक्त करने की शक्ति अनन्य रूप से मुख्य न्यायमूर्ति में निहित होने के कारण इसका प्रयोग उच्च न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश द्वारा नहीं किया जा सकता । पश्चात्वर्ती अर्थात् अन्य न्यायाधीश उस शक्ति का प्रयोग अप्रत्यक्ष रूप से भी नहीं कर सकते जैसाकि वर्तमान मामले में करने का प्रयास किया गया है । माननीय न्यायाधीशों ने न्यायालय के रजिस्ट्रार को यह रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निदेश देकर कि क्या उन पदों का कार्य, जिनपर राजस्थान न्यायिक सेवा के अधिकारियों की नियुक्ति प्रतिनियुक्ति के आधार पर की जाती है, उच्च न्यायालय के कर्मचारियों द्वारा चलाया जा सकता है और यह भी निदेश देकर कि ऐसी रिपोर्ट को प्रशासनिक तौर पर अन्य न्यायाधीशों के विचारार्थ पूर्ण न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत

किया जाए, उच्च न्यायालय स्थापन में कुछ ऐसे पदों पर नियुक्त करने की शक्ति का अप्रत्यक्षतः प्रयोग करने का प्रयोग किया है जिनपर नियुक्ति केवल मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा की जा सकती है । मामले का निपटारा करने वाले विद्वान् न्यायाधीशों की स्वयं भी यही राय थी कि उनके सामने लंबित रिट याचिका को प्रभावी रूप से विनिश्चित करने के लिए इस प्रश्न का विनिश्चित किया जाना अपेक्षित नहीं था । अतः उन्हें वहां रुकना चाहिए था और उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार को आक्षेपित निदेश देने के लिए अग्रसर नहीं होना चाहिए था विशेषतया इसलिए क्योंकि यह विश्वास करना कठिन है कि राजस्थान उच्चतर न्यायिक सेवा या राजस्थान न्यायिक सेवा का काडर इतना कमजोर और क्षीण है कि आठ अधिकारियों (नियमों के अधीन अधिकतम) के उच्च न्यायालय में प्रतिनियुक्ति पर नियुक्त किए जाने पर उनके स्थान पर अन्य अधिकारियों की व्यवस्था नहीं की जा सकती ।

32. विद्वान् काउंसेल ने अनुच्छेद 235 का अवलंब लेकर एक कमजोर प्रयास किया और दलील दी कि "उच्च न्यायालय" से केवल "मुख्य न्यायमूर्ति" अभिप्रेत नहीं है बल्कि "संयुक्त रूप से सभी न्यायाधीश" अभिप्रेत हैं और इसलिए आक्षेपित निदेश विधिमान्य रूप से जारी किए जा सकते हैं । हम इन दलीलों को इसके पश्चात् दिए गए कारणों से नामंजूर करते हैं।

33. अध्याय 6 अधीनस्थ न्यायालयों से संबंधित है । अनुच्छेद 233 जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए उपबंध करता है । जिला न्यायाधीश की नियुक्ति राज्य के राज्यपाल द्वारा उच्च न्यायालय के परामर्श से की जाती है। अनुच्छेद 234 यह उपबंध करता है कि ज़िला न्यायाधीशों से भिन्न व्यक्तियों की किसी राज्य की न्यायिक सेवा में नियुक्ति, उस राज्य के राज्यपाल द्वारा, राज्य लोक सेवा आयोग से और ऐसे राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करने के पश्चात्, और राज्यपाल द्वारा इस निमित्त बनाए गए नियमों के अनुसार की जाएगी । अनुच्छेद 235 निम्नानुसार उपबंध करता है :–

> "235. अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण - जिला न्यायालयों का नियंत्रण जिसके अंतर्गत राज्य की न्यायिक सेवा के व्यक्तियों और जिला न्यायाधीश के पद से अवर किसी पद को धारण करने वाले व्यक्तियों की पदस्थापना, प्रोन्नति और उनको छुट्टी देना है, उच्च न्यायालय में निहित होगा, किंतु इस अनुच्छेद की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह ऐसे किसी व्यक्ति से उसके अपील के अधिकार को छीनती है जो उसकी सेवा की शर्तों का विनियमन करने वाली विधि के अधीन उसे है या उच्च न्यायालय को इस बात के लिए प्राधिकृत करती है कि वह उससे ऐसी विधि के अधीन विहित उसकी सेवा की शर्तों के अनुसार व्यवहार न करके अन्यथा व्यवहार करे ।"

34. इस अनुच्छेद से यह पता चलता है कि उच्च न्यायालय राज्य की न्यायिक सेवा के सदस्यों पर अपना प्रशासनिक, न्यायिक और अनुशासनिक नियंत्रण रखता है । अनुच्छेद में निर्दिष्ट "नियंत्रण" शब्द का प्रयोग व्यापक रूप में किया गया है जिसके अन्तर्गत अधीनस्थ न्यायालयों के कार्यकरण का साधारण अधीक्षण, अधीनस्थ न्यायालयों के पीठासीन अधिकारियों पर अनुशासनिक नियंत्रण और पदच्युति, हटाए जाने तथा रैंक में अवनति करने का दंड अधिरोपित करने या अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सिफारिश है । "नियंत्रण" में अनुशासनिक जांच के प्रयोजन के लिए न्यायिक सेवा के किसी सदस्य को निलंबित करना, उसका स्थानांतरण, पुष्टिकरण और प्रोन्नति भी सम्मिलित है । (देखिए : **हरियाणा राज्य** बनाम **इन्द्र प्रकाश आनन्द**[1], **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **बतुक देव पति त्रिपाठी**[2])। **गुजरात राज्य** बनाम **रमेश चन्द्र ,मश्रुवाला**[3] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 235 में "नियंत्रण"

---

[1] [1977] 2 उम. नि. प. 1118 = ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 1841.

[2] [1979] 1 उम. नि. प. 1220 = (1978) 2 एस. सी. सी. 102.

[3] [1978] 1 उम. नि. प. 889 = ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1619.

से अनन्य नियंत्रण अभिप्रेत है न कि दोहरा नियंत्रण । (**आंध्र प्रदेश के मुख्य न्यायमूर्ति और अन्य** बनाम **एल.वी.ए. दिक्षितुलु**[1], **पश्चिमी बंगाल राज्य** बनाम **निरपेन्द्र नाथ बागची**[2] भी देखिए)।

35. **तेजपाल सिंह (मृतक) उसके विधिक प्रतिनिधियों की मार्फत** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[3] तथा **जी.एस. नागमोती** बनाम **मैसूर राज्य**[4] वाले मामलों में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 235 में निर्दिष्ट "नियंत्रण" उच्च न्यायालय में न कि उसे किसी न्यायाधीश या किन्हीं न्यायाधीशों या किसी समिति में निहित है । **रजिस्ट्रार मद्रास उच्च न्यायालय** बनाम **आर. रजियाह**[5] वाले मामले में बाद में दिए गए विनिश्चय में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अधीनस्थ न्यायपालिका के किसी सदस्य के विरुद्ध कई न्यायाधीशों की समिति द्वारा जांच कराना वर्जित नहीं है यदि समिति की रिपोर्ट सभी न्यायाधीशों को परिचालित की जाए और अंतिम विनिश्चय पूर्ण न्यायपीठ की बैठक में लिया जाए ।

36. अतः महत्वपूर्ण यह है कि यद्यपि अनुच्छेद 235 में "उच्च न्यायालय" शब्द प्रयोग किया गया है, किंतु अनुच्छेद 229 में "मुख्य न्यायमूर्ति" शब्द का प्रयोग हुआ है । अतः संविधान, जहां तक "अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण" के उच्च न्यायालय में निहित होने का संबंध है उन्हें दो भिन्न परिकरण मानता है किंतु उच्च न्यायालय का प्रशासन मुख्य न्यायमूर्ति में निहित है ।

37. यह आक्षेपित निदेश कि क्या उच्च न्यायालय में ऐसे पदों पर, जिनपर अधिकारियों की नियुक्ति प्रतिनियुक्ति पर की जाती है उच्च न्यायालय के कर्मचारियों से कार्य लिया जा सकता है, उच्च न्यायालय का प्रशासन मुख्य न्यायमूर्ति में निहित करने वाले अनुच्छेद 229 के आज्ञापन के स्पष्ट रूप से प्रतिकूल है और उसके प्राधिकार पर अतिक्रमण आशयित है ।

38. जैसा कि ऊपर इंगित किया गया है, सांविधानिक स्कीम के अन्तर्गत, मुख्य न्यायमूर्ति उच्चतम प्राधिकारी है और जहां तक उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों का संबंध है, अन्य न्यायाधीशों की प्रशासनिक शाखा में कोई भूमिका नहीं हैं । इसमें कोई संदेह नहीं है कि कुछ न्यायाधीश एक दिन अपने क्रम पर मुख्य न्यायमूर्ति बन जाएंगे किंतु सांविधानिक अनुशासन के अधीन यह अत्यावश्यक है कि वे प्रशांति में कार्य करें । न्यायाधीश "एकान्तवासी" के रूप में वर्णित किए गए हैं जो अपनी इच्छाओं और अभिलाषाओं को तपस्या के माध्यम से समाप्त कर देते हैं । उनका मिशन प्रकाश देना होता है न कि ऊष्मा । यह आवश्यक है कि कम से कम कुछ मामलों में, उच्च न्यायालय का प्रशासन चलाने की उनकी इच्छा समय के पहले अंकुरित न हो ।

39. उपरोक्त कारणों से यह अपील मंजूर की जाती है । दो विद्वान न्यायाधीशों द्वारा पारित तारीख 28.3.93 का निर्णय, जहां तक उसका संबंध निर्णय के प्रथम भाग में उल्लिखित रजिस्ट्रार को दिए गए निदेश से है, अपास्त किया जाता है । शेष सभी पहलुओं पर निर्णय कायम रखा जाता है । खर्च के संबंध में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

सि./कृ.

---

[1] ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 193 = [1971] 1 एस. सी. आर. 26.
[2] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 447 = [1966] 1 एस. सी. आर. 771.
[3] [1986] 4 उम. नि. प. 1018 = ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 1814.
[4] (1969) 3 एस. सी. सी. 325 = 1970 एस. एल. आर. 911.
[5] ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 1388 = (1988) 3 एस. सी. सी. 211.